वैदिक समुद्र के रत्नों का जादू

वैदिक समुद्र अथाह तथा अमूल्य रत्नों की खान है जहाँ के रत्न सामान्य रत्नों से विशिष्ट हैं। पाषाण खंडो को रत्न की संज्ञा देने वाले वैदिक अलौकिक रत्नों की विशेषता नहीं समझते। वैदिक समुद्र के अलौकिक रत्न जीवन को समुन्नत बनाने के लिए तथा पार्थिव पाषाण खंडवाले रत्न जीवन की अधोगति कर देते हैं। माया की अन्धी गली में भ्रमित कर साधारण रत्न जीवन का दुरन्त कर देते हैं। अतः वैदिक समुद्र के अमूल्य रत्नों का माहात्म्य तथा जादू निर्विवाद है। वैदिक समुद्र के रत्नों को धारण कर जीवन ज्यौर्तिमय एवं विकासोन्मुख बनता है।

वैदिक ऋचाओं में सबके कल्याण की भावना समाहित है यथा -

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते शं राजन्नोषधीभ्यः

(सामवेद ६/५३)

अर्थात्- हे प्रभु आप हमारे जीवन को पवित्र कीजिए। सात्विक आहार से जीवन पवित्र बनता है। कहा भी है - **''आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः''** अर्थात् भोजन के शुद्ध पवित्र और सात्विक होने पर हमारे सत्व-रस, रक्त, मांस, मेदा, मज्जा, अस्थिशुक्र, सब धातुऐं पवित्र होती हैं, जिससे सद्बुद्धि उत्पन्न होती है। मांस भक्षक का मन निर्मल तथा पवित्र नहीं हो सकता। निर्मल मन ही शुभचिंतन कर सकता है। सब को मित्र की दृष्टि से देखने का विचार भी निर्मल मन में आता है। वस्तुतः समस्त सम्बन्धों में से मित्रता का सम्बन्ध अति महत्वपूर्ण है। मित्रता की पहचान लक्षण व व्यवहार के सम्बन्ध में वैदिक ऋचा का आवाहन प्रेरणास्पद है यथा **''अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशो अनीक''** इस ऋचा का अभिप्राय है कि मित्र शुभचिंतक तथा हितैषी होना चाहिये।

मित्र को चाहिये कि मित्र को हृदय के अन्दर कर ले। उनके दो तन व एक मन होना चाहिये। वैदिक साहित्य में मानवीय उत्कर्ष की प्रेरणायें समाहित हैं, अनादि निधना, सून्तता वेदवाणी का नाम सब जानते हैं, वेद के मूलपाठों की प्रकृति की आठ विकृतियाँ जटा- माला- शिखा- लेखा- ध्वज- दंड- रथ व धन के नाम से कभी-कभी सुनने को मिल जाती हैं। आश्चर्य का विषय है कि वैदिक-साहित्य का पठन पाठन निरन्तर कम होता जा रहा है।

ईश्वरीय ज्ञान का पढ़ना- पढ़ाना, सुनना व सुनाना, मानव मात्र का कर्तव्य है। कुमारिल भट्ट के अनुसार यदि चारो वेद नहीं पढ़ सकते तो प्रत्येक वेद का एक-एक मन्त्र अर्थसहित याद करें

''चतुर्णामपिवेदानामधीतिः षुशकानचेत्
मन्त्रं मन्त्रमधीयीत मार्गस्थो नावसीदति''

प्रत्येक मन्त्र की रचना मननपूर्वक है अतः यास्क के अनुसार **''मन्त्रः मननात्''** अर्थात मन्त्रों का अर्थ मननपूर्वक समझ में आता है, उन्हे कंठस्थ कर उन पर मनन करना अपेक्षित है। तोते की तरह उन्हें रटना निरर्थक है। मन्त्रों द्वारा प्रदत्त वैचारिक रत्नों को धारण करने से आत्मोत्कर्ष संभव है।

वेदों से धर्म उसी तरह प्रवाहित है जिस तरह पर्वतों से नदियाँ -

वेदात् धर्मः प्रवहति शैलादपि नदी यथा'' १
वेदमेव सदाभ्यस्येत् नास्ति वेदात्परं धनम्। २

वैदिक समुद्र का बहुमूल्य रत्न है 'ओम्' जिस पर चिन्तन करने की प्रेरणा मुंडकोपनिषद् से मिलती है -

''तमेवेकं जानथ आत्मानम्
अन्या वाचो विमुञ्चथ अमृतस्यैष सेतुः''

अर्थात्- एक मात्र ओउम् को जानो जो अमृत का सेतु है जो अमृत सागर का साधक है। ओउम् की महिमा का कारण है अकेले ओम् के २० अर्थो का होना तथा इन २० अर्थों को मेरे पिता विद्यावाचस्पति पं. आचार्य रमेश शास्त्री, विद्यावारिधि ने श्लोक बद्ध किया है यथा -

''अवधातोर्मनिप्रत्यये सविहते ओमाक्षरं साध्यते।
रक्षावाप्तिगति प्रदीप्तिश्रवण स्वाम्यंच याञ्च्या क्रिया।
बुद्धिर्ज्ञानं विवेकदानं मननं हिंसा समालिंगनम्
भागः प्राप्ति रतिशुभञ्च कुशलं आमार्थकः विंशतिः ।।

अर्थात् - **ओम शब्द के अर्थ २० हैं रक्षा- वाप्ति- गति- प्रदीप्ति - श्रवण- स्वाम्य- याचना- क्रिया- बुद्धि- ज्ञान- विवेक-दान-मनन-अहिंसा-आलिंगन- भाग(ऐश्वर्य)- प्राप्ति-रति-शुभ-कुशल, ये बीस अर्थ ओऽम् के हैं, अतः 'राम' का जाप करने वाले से ओऽम् का जाप करनेवाला आगे है।** इसके साथ ही ओम् शब्द के तीन अक्षर अ = ईश्वर उ = जीव म= प्रकृति ईश्वर- जीव- प्रकृति के प्रतीक हैं। गणेशपुराण में ''ओम्'' को गणेश का प्रतीक माना गया है -

''ओंकार रुपो भगवान् उक्तस्तु गणनायकः।
सहि सर्वेषु कार्येषु पूज्यतेऽसौ विनायकः ।।''

व्यावहारिक रूप से मनुष्य मात्र जब भोजन से पूर्ण तृप्त होते हैं तब चाहे ईसाई हों या यवन, बौद्ध हों या जैन यहूदी हों या अन्य कोई, डकार के साथ सभी के मुँह से ओम् शब्द निकलता है। ओम् की अन्य विशेषता है अन्य मतों में इसकी स्वीकृति जैनियों का **ओम् नमो अरिहन्ताणम्,** अंग्रेजी भाषा के ओमनिशियेन्त, ओमनिशिपोटेन्ट तथा ओमनी प्रेजेन्ट शब्द इसकी सार्वजनीनता के सूचक हैं।

वैदिक समुद्र के अमूल्य रत्न हैं ऋचाओं के सद्विचार जो लोकमंगल के साधक हैं -

सुगः पन्था अनृक्षर ० ऋग्वेद १/४१/४

अर्थात्- सत्य का मार्ग निष्कंटक, सरल और सुगम है।

मधुनक्त मुतोषसो ० ऋग्वेद १/९०/७

संसार में सुख शान्ति और प्रेमभरे सत्कर्म करना चाहिये।

मा नो अग्नेऽमतये ० ऋग्वेद ३/१६/५

हम बुद्धिमान वीर तथा धनी बनें, निन्दक अपकारी, पिशुन और धूर्त न बनें।

कालो अश्वो वहति सप्त रश्मिः ०अथर्व१९/ ५३/१

समय रूपी अश्व तीव्रता से भाग रहा है इसे व्यर्थ न करें।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति ० यजु १९/३०

व्रत धारण करने से मनुष्य को श्रेष्ठ अधिकार व योग्यता की प्राप्ति होती है।

पावमानी स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम् ० १३०३

अर्थात्- जिससे मनुष्य के विचार सत्कर्म की ओर प्रेरित हों ऐसे साहित्य से लोकमंगल होता है।

'येन देवा न वियन्ति नो च अथर्व ० ३/३०/४

अर्थात् - विद्वान कभी लड़ते झगड़ते या ईर्ष्या द्वेष नहीं करते। वैचारिक 'समानता' के लिए सत्साहित्य का अध्ययन, उस पर मनन चिन्तन एवं व्यवहारिक जीवन में उपयोग अपेक्षित है जिससे विश्वमंगल संभव है। वैदिक समुद्र के रत्नों से यदि जीवन को सजायें, तो जीवन सुशोभित ही नहीं, महनीय भी बनेगा।

मन को ज्योतिर्मय बनाने के लिए संसार को विनाश के कगार से बचाने के लिए आतंकवाद के सर्प को मिटाने के लिए, हिंसा घृणा एवं द्वेष का अन्धकार भगाने के लिए नील गगन तले पृथ्वीपर एक सुखी परिवार बसाने के लिए वेद समुद्र के रत्नों का संचय एवं जीवन को उनसे अभिमंत्रित बनाना अपेक्षित है। मेरे गीत में इन्ही भावों को अभिव्यक्ति मिली है यथा -

अंधेरा जब मन का संसार उजाला कौन करे फिर पार ?
परिधि में घूम रहे दिनरात, न मन से मन की कोई बात,
रूदन के गूँजे अस्फुट शब्द, हुआ करते जब भी आघात।
सुधी गायक ही जब अज्ञात, करेंगे क्या वीणाँ के तार ?
राम का कभी खुदा का गान, फूल अक्षत द्वारा सम्मान,
नहीं जीवित प्रतिमा से प्यार,हुई प्रियतम से क्या पहचान?
न कोई साध्य न कोई राह, साधना में ऐसी क्या सार ?
जिसे है जीवन से अनुराग, आयु के हित करता सब त्याग,
सृजन के लिए मिटा हरबार, रहा अमरत्व उसी का भाग,
किया जिसने शव का श्रंगार, चेतना का न उसे उपहार।

(स्वर्णाम्बरा (गीत संग्रह) डॉ. महाश्वेता चतुवैदी)

संसार को सुखमय बनाने के लिए सद्विचार अपेक्षित हैं जो हमें संसार की प्रथम पुस्तक ऋग्वेद व अन्य अथर्व-साम-यजुर्वेद से प्राप्त होते हैं जिनमें मानव मात्र के कल्याण की सद्भावना सन्निहित है।

''पायें वैदिक सिन्धु से रत्नों के उपहार।
ज्योतिर्मय जिससे बने अन्धा ये संसार।।
नहीं यहाँ संकीर्णता को कोई स्थान।
मन्त्रों में संचित मिला सब का अभ्युत्थान।।
व्यक्ति और भाषा नहीं मिलती यहाँ विशेष।
ज्ञान और विज्ञान के साधक यहीं अशेष।।
यौगिक शब्दों के रहे वेद सदा भंडार।
विश्व एकता का यही कर सकते संसार।।

(महाश्वेता की दोहावली)

आज आवश्यकता है इस दिग्भ्रान्त संसार में मानवता विजयिनी हो सके। ...

- डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी डी. लिट्.
प्रोफेसर्स कालोनी, श्यामगंज,
बरेली-२४३००५ (उ.प्र.)